कामन्दकीय नीतिसार – षष्ठः सर्गः (कण्टकशोधनप्रकरणम्)

(Kamandakiya Nītisara – Chapter 6: Kaṇṭakaśodhanaprakaraṇam)



मूल ग्रंथकार (Original Author) : आचार्य कामन्दक (*Ācārya Kāmandaka*)

व्याख्या एवं प्रस्तुति (Commentary & Presentation) : *Indian Philosophy & Ethics*

लेखक / संपादक (Author / Editor) : *Anand Singh Dhami*

विषय क्षेत्र (Subject Area) : कामन्दकीय नीतिसार, प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन, भारतीय राजनीतिक दर्शन, संस्कृत साहित्य, शासन-व्यवस्था, दण्डनीति, भारतीय ज्ञान-परम्परा, नीतिशास्त्र

संक्षिप्त परिचय : *कामन्दकीय नीतिसार के* ***षष्ठ सर्ग – कण्टकशोधनप्रकरणम्*** *का हिन्दी अनुवाद, IAST लिप्यन्तरण, शब्दार्थ, भावार्थ तथा दार्शनिक विवेचन प्रस्तुत है। इस सर्ग में राज्य से दुष्ट एवं अराजक तत्त्वों के उन्मूलन, न्यायसंगत एवं निष्पक्ष दण्ड-विधान, राजधर्म, प्रजा-रक्षण, सुशासन तथा नैतिक नेतृत्व के सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है। साथ ही, इन शिक्षाओं का आधुनिक विधि-शासन, भ्रष्टाचार-निवारण, आन्तरिक सुरक्षा एवं सुशासन के परिप्रेक्ष्य में भी विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।*

ऑनलाइन लेख: *https://indianphilosophyethics.blogspot.com/2026/07/kamandakiya-nitisara-sarga-6-kantakashodhana.html*

प्रस्तावना

भारतीय नीतिशास्त्र की गौरवशाली परम्परा में **कामन्दकीय नीतिसार** एक ऐसा ग्रन्थ है, जो शासन, प्रशासन, कूटनीति तथा नेतृत्व के सिद्धान्तों का समन्वित एवं व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत करता है। महर्षि कामन्दक ने राजधर्म को केवल राज्य-विस्तार अथवा राजनीतिक सफलता का माध्यम नहीं माना, बल्कि उसे लोककल्याण, न्याय, आत्मसंयम और नैतिक आचरण पर आधारित उत्तरदायी शासन की व्यवस्था के रूप में प्रतिपादित किया है।

षष्ठः सर्गः – कण्टकशोधनप्रकरणम्, अर्थात् कामन्दकीय नीतिसार का षष्ठ सर्ग, राज्य-शरीर में उत्पन्न **कण्टकों (दुष्ट/भ्रष्ट/अपराधी तत्त्वों)** को पहचानने, उनका विवेकपूर्ण दण्ड-विधान करने तथा राज्य को उनसे मुक्त करने की समग्र प्रक्रिया का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करता है। इस सर्ग में यह प्रतिपादित किया गया है कि किसी भी राज्य की वास्तविक शक्ति उसके धन, सेना अथवा बाह्य वैभव में नहीं, बल्कि उसकी **आन्तरिक शुद्धता**, **अनुशासन** तथा **न्याय-व्यवस्था** में निहित होती है। एक विवेकी, निष्पक्ष एवं धर्म-ज्ञाता राजा ही राज्य-शरीर से **शल्य (काँटे)** को निकालकर प्रजा को अभय, समृद्धि एवं उत्कर्ष प्रदान कर सकता है।

इस पुस्तक में षष्ठ सर्ग के प्रत्येक श्लोक का मूल संस्कृत पाठ, IAST लिप्यन्तरण, शब्दार्थ, भावार्थ, दार्शनिक विवेचन तथा आधुनिक **सुशासन, भ्रष्टाचार-निवारण, न्यायिक-प्रक्रिया, आन्तरिक-सुरक्षा एवं रणनीतिक प्रबन्धन** के परिप्रेक्ष्य में विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। विशेष रूप से **दूष्य-दण्ड की विधियाँ**, **गुप्त एवं प्रकाश दण्ड का विवेक**, **राज-वल्लभों के प्रति निष्पक्षता**, **दण्ड-संतुलन (गोल्डन मीन)** तथा **शल्य-उद्धार की समग्र प्रक्रिया** को आधुनिक शासन और नेतृत्व की कसौटी पर समझाने का प्रयास किया गया है। इस सर्ग के विवेचन में **कौटिल्यीय अर्थशास्त्र**, **मनुस्मृति**, **श्रीमद्भगवद्गीता** एवं **चरकसंहिता** के सिद्धान्तों का सामयिक उल्लेख किया गया है, जो इसके दार्शनिक आधार को और अधिक सुदृढ़ करते हैं।

आशा है कि यह पुस्तक भारतीय दर्शन, नीतिशास्त्र, राजधर्म, संस्कृत साहित्य, प्रशासनिक अध्ययन तथा भारतीय ज्ञान-परम्परा के विद्यार्थियों, शोधार्थियों एवं जिज्ञासु पाठकों के लिए एक उपयोगी और प्रमाणिक अध्ययन-सामग्री सिद्ध होगी।

श्लोक १ (राजा की योग्यता एवं राज्य-चिन्तन)

श्लोक

लोके वेदे च कुशलः कुशलैः परिवेष्टितः ।
आदृतश्चिन्तयेद्राज्यं सबाह्याभ्यन्तरं नृपः ॥१॥

IAST

Loke vede ca kuśalaḥ kuśalaiḥ pariveṣṭhitaḥ |
Ādṛtaścintayedrājyaṃ sabāhyābhyantaraṃ nṛpaḥ ||1||

शब्दार्थ
- **लोके** – लौकिक व्यवहार/संसार में
- **वेदे** – वेद/शास्त्रों में
- **कुशलः** – कुशल/निपुण
- **कुशलैः** – कुशल/योग्य मंत्रियों/सलाहकारों से
- **परिवेष्ठितः** – घिरा हुआ/सेवित
- **आदृतः** – आदर-प्राप्त/सम्मानित
- **चिन्तयेत्** – विचार/मनन करे

• **राज्यम्** – राज्य का
• **सबाह्याभ्यन्तरम्** – सबाह्य (बाह्य) एवं अभ्यन्तर (आन्तरिक) – दोनों का
• **नृपः** – राजा।

भावार्थ

जो राजा लौकिक-व्यवहार एवं वेद-शास्त्रों में कुशल है, योग्य मन्त्रियों से घिरा हुआ है तथा सबका आदर-पात्र है, वही अपने राज्य के बाह्य (शत्रु, पड़ोसी, कोष, दुर्ग) एवं आन्तरिक (प्रजा, मंत्री, अंतर्विरोध) – दोनों पक्षों का सम्यक् चिन्तन कर सकता है। बिना योग्यता के शासन-चिन्तन असंभव है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'आदर्श-राजा-लक्षण'** है – 'लोक' (व्यावहारिक बुद्धि) एवं 'वेद' (शास्त्रीय-धर्म) का समन्वय। 'परिवेष्ठितः' – अकेला राजा नहीं, अपितु 'मन्त्रि-परिषद्' (Council of Ministers) से युक्त होना चाहिए। यह अर्थशास्त्र के 'मन्त्रि-पुरोहित-सेनापति' सिद्धान्त से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'नेतृत्व' (Leadership) – एक प्रभावी CEO/प्रधानमंत्री को **'डोमेन-एक्सपर्टीज़'** (लोक/वेद-कुशल), **'टीम-ऑफ-एडवाइजर्स'** (कुशलैः परिवेष्ठितः) एवं **'होलिस्टिक-विजन'** (सबाह्याभ्यन्तर) की आवश्यकता होती है – यही 'स्ट्रैटेजिक थिंकिंग' है।

श्लोक २ (आन्तरिक-बाह्य की एकता – शरीर-राष्ट्र उपमा)

श्लोक

आभ्यन्तरं शरीरं स्वं बाह्यं राष्ट्रमुदाहृतम् ।
अन्योन्याधारसम्बन्धादेकमेवेदमिष्यते ॥२॥

IAST

Ābhyantaraṃ śarīraṃ svaṃ bāhyaṃ rāṣṭram udāhṛtam |

Anyonyādhārasambandhāt ekamevedaṃ iṣyate ||2||

शब्दार्थ

• **आभ्यन्तरम्** – आन्तरिक
• **शरीरम्** – अपना शरीर
• **स्वम्** – अपना
• **बाह्यम्** – बाह्य
• **राष्ट्रम्** – राज्य/राष्ट्र
• **उदाहृतम्** – कहा गया/उपमा दी गई
• **अन्योन्य** – परस्पर
• **आधार** – आधार/सहारा
• **सम्बन्धात्** – सम्बन्ध से
• **एकम्** – एक
• **इव** – समान

• **इदम्** – यह (शरीर-राष्ट्र)
• **इष्यते** – माना जाता है ।

भावार्थ
शास्त्रों में राजा का अपना शरीर 'आन्तरिक' (अभ्यन्तर) कहा गया है, और राज्य/राष्ट्र 'बाह्य' (बाह्य) कहा गया है। क्योंकि ये दोनों परस्पर एक-दूसरे के आधार हैं (शरीर के बिना राज्य नहीं, राज्य के बिना शरीर का कोई अर्थ नहीं), इसलिए इन दोनों को एक समान (एकमेव) ही माना जाता है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'अद्वैत-राज्य-दर्शन'** है – शरीर और राज्य का 'अभिन्न-सम्बन्ध' (अन्योन्याधार), जैसे आत्मा-शरीर का सम्बन्ध। यह उपनिषदों के 'पिण्ड-ब्रह्माण्ड-सिद्धान्त' (व्यष्टि-समष्टि) का राजनीतिक रूप है – राजा की भलाई ही राज्य की भलाई है, और राज्य की भलाई ही राजा की भलाई है।

आधुनिक संदर्भ

आज की 'राष्ट्र-सुरक्षा' एवं 'जन-स्वास्थ्य' नीतियाँ – 'शरीर' (स्वास्थ्य/सुरक्षा-बल) एवं 'राष्ट्र' (अर्थव्यवस्था/बुनियादी ढाँचा) – परस्पर अविभाज्य हैं (जैसे कोविड-काल में दिखा)। 'एकमेव' – समग्र-दृष्टिकोण (Holistic Approach) ही सफल शासन की कुंजी है।

श्लोक ३ (राष्ट्र ही राज्य-अंगों का मूल)

श्लोक

राज्याङ्गानां तु सर्वेषां राष्ट्राद्भवति सम्भवः ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन राजा राष्ट्रं समुन्नयेत् ॥३॥

IAST

Rājyāṅgānāṃ tu sarveṣāṃ rāṣṭrādbhavati sambhavaḥ |
Tasmātsarvaprayatnena rājā rāṣṭraṃ samunnayet ||3||

शब्दार्थ
• **राज्याङ्गानाम्** – राज्य के अंगों (मंत्री, कोश, दुर्ग, बल, मित्र आदि) की
• **सर्वेषाम्** – सभी की
• **राष्ट्रात्** – राष्ट्र/प्रजा/जनता से
• **सम्भवः** – उत्पत्ति/आधार होता है
• **तस्मात्** – इसलिए
• **सर्वप्रयत्नेन** – समस्त प्रयत्नों से
• **राजा** – राजा
• **राष्ट्रम्** – राष्ट्र/प्रजा को
• **समुन्नयेत्** – उन्नत/समृद्ध करे ।

भावार्थ
राज्य के सभी अंगों (सप्तांग – स्वामी, मंत्री, जनपद, दुर्ग, कोश, बल, मित्र) का उद्भव एवं आधार राष्ट्र/प्रजा से होता है। इसलिए राजा को समस्त प्रयत्नों द्वारा अपने राष्ट्र (जनता एवं भूमि) का उत्थान/विकास (समुन्नयेत्) करना चाहिए। **प्रजा ही परम-पूँजी है।**

दार्शनिक विवेचन

'राष्ट्र' – यहाँ 'जनपद' (जनता + भूमि) – अर्थशास्त्र के सप्तांगों में यह 'प्रकृति' (Nature/People) है। कामन्दकि कहते हैं – कोश, दुर्ग, बल सब प्रजा के कर-धन एवं श्रम से बनते हैं; अतः प्रजा-हित ही राज्य-हित है। यह 'लोक-कल्याणकारी राज्य' (Welfare State) का प्राचीनतम सूत्र है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'मानव-संसाधन' (Human Resources) एवं 'जीडीपी' – यदि जनता (राष्ट्र) समृद्ध नहीं, तो सेना, बुनियादी ढाँचा, कर-राजस्व (अन्य अंग) सफल नहीं हो सकते। 'सर्वप्रयत्नेन' – शिक्षा, स्वास्थ्य, रोज़गार में निवेश (समुन्नयेत्) ही दीर्घकालिक विकास का मूल है।

श्लोक ४ (शरीर-रक्षा ही धर्म-साधन)

श्लोक

लोकानुग्रहमन्विच्छञ्छरीरमनुपालयेत् ।
राज्ञः संरक्षणं धर्मः शरीरं धर्मसाधनम् ॥४॥

IAST

Lokānugrahamanvicchañcharīramanupālayet |
Rājñaḥ saṃrakṣaṇaṃ dharmaḥ śarīraṃ dharmasādhanam ||4||

शब्दार्थ

- **लोकानुग्रहम्** – लोक (प्रजा) का अनुग्रह/उपकार
- **अन्विच्छन्** – चाहता हुआ
- **शरीरम्** – अपने शरीर की
- **अनुपालयेत्** – रक्षा/देखभाल करे
- **राज्ञः** – राजा का
- **संरक्षणम्** – संरक्षण/स्वास्थ्य-रक्षा
- **धर्मः** – धर्म (कर्तव्य) है
- **शरीरम्** – शरीर
- **धर्मसाधनम्** – धर्म का साधन/उपकरण है ।

भावार्थ

राजा प्रजा का अनुग्रह (कल्याण) करना चाहता है, इसलिए उसे सर्वप्रथम अपने शरीर की रक्षा (स्वास्थ्य/सुरक्षा) करनी चाहिए। राजा के शरीर की रक्षा करना उसका परम-धर्म है, क्योंकि यह शरीर ही धर्म (राज्य-पालन, प्रजा-रक्षा) का साधन है। आत्म-देखभाल स्वार्थ नहीं, कर्तव्य है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'साधन-रूप-शरीर'** (Body as Instrument) का सिद्धान्त है – 'धर्मसाधनम्' शब्द अत्यंत गहन है – शरीर आत्मा का वाहन नहीं, अपितु 'धर्म-कर्म' का माध्यम है। गीता का 'शरीर-यात्रा' (योग-क्षेम) एवं चरक-संहिता का 'स्वास्थ्य-रक्षा' (आयुर्वेद) इसी पर आधारित है – राजा का स्वास्थ्य राज्य का स्वास्थ्य है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'लीडरशिप-हेल्थ' – किसी राष्ट्रप्रमुख/CEO का स्वास्थ्य (शरीर-रक्षा) राष्ट्र/कम्पनी की स्थिरता के लिए अनिवार्य है। 'लोकानुग्रह' हेतु स्वयं का फिटनेस, मेंटल-हेल्थ एवं सुरक्षा (अनुपालयेत्) – यही 'रिस्क मैनेजमेंट' एवं 'ड्यूटी-ऑफ-केयर' है।

श्लोक ५ (धर्मार्थ-हिंसा में पाप-लेप नहीं)

श्लोक

धर्म्यामारेभिरे हिंसामृषिकल्पा महीभुजः ।
तस्मादसाधून् धर्माय निघ्नन्दोषैर्न लिप्यते ॥५॥

IAST

Dharmyāmārebhire hiṃsāmṛṣikalpā mahībhujaḥ |
Tasmādasādhūn dharmāya nighnandoṣairna lipyate ||5||

शब्दार्थ

- **धर्म्याम्** – धर्म-युक्त
- **आरेभिरे** – आरम्भ/प्रारम्भ करते थे
- **हिंसाम्** – हिंसा/दण्ड-कर्म
- **ऋषिकल्पाः** – ऋषि-तुल्य (धार्मिक/तपस्वी-सदृश)
- **महीभुजः** – राजा
- **तस्मात्** – इसलिए
- **असाधून्** – असाधु/दुष्ट/अपराधियों को
- **धर्माय** – धर्म के लिए
- **निघ्नन्** – मारते/दण्डित करते हुए
- **दोषैः** – पाप/दोष से
- **लिप्यते** – लिप्त/बँधा नहीं होता ।

भावार्थ

ऋषि-तुल्य (धार्मिक एवं तपस्वी) राजा भी धर्म-रक्षा के लिए हिंसा (दण्ड-युद्ध) का सहारा लेते थे। इसलिए राजा धर्म के लिए असाधु (दुष्ट/अपराधियों) का वध/दण्ड करके पाप-दोष से लिप्त नहीं होता – क्योंकि यह 'धर्म-रक्षा' है, 'व्यक्तिगत-हिंसा' नहीं।

दार्शनिक विवेचन

यह **'आपद्धर्म'** एवं **'कण्टक-शोधन-न्याय'** का मूल है – जैसे वैद्य रोग-नाश हेतु शस्त्र-प्रयोग करता है (परन्तु पापी नहीं), वैसे ही राजा धर्म-रक्षा हेतु दण्ड-प्रयोग करता है। यह 'हिंसा-अहिंसा' के द्वन्द्व का नीति-समाधान है – 'राजर्षि' (Raja-rishi) भी दण्ड का प्रयोग करता है क्योंकि वह 'लोक-संग्रह' (जन-हित) के लिए आवश्यक है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'राज्य-दण्ड' (State Punishment) – जेल, मृत्युदण्ड, पुलिस-फायरिंग – यदि कानून एवं जन-सुरक्षा (धर्म) के लिए है, तो वह 'व्यक्तिगत-हिंसा' नहीं, 'वैध-दण्ड' है। यही 'न्यायिक-हत्या' (Judicial Killing) एवं 'पुलिस-एनकाउंटर' की नैतिक बहस का प्राचीन आधार है – जो समाज-हित में है, वह दोष-रहित है।

श्लोक ६ (धर्म-संरक्षण, अर्थ-वृद्धि एवं दुष्ट-शिक्षा)

श्लोक

धर्मसंरक्षणपरो धर्मेणार्थं विवर्धयेत् ।
ये ये प्रजाः प्रबाधेरन् तांस्ताञ्छिष्यान्महीपतिः ॥६॥

IAST

Dharmasaṃrakṣaṇaparo dharmeṇārthaṃ vivardhayet |
Ye ye prajāḥ prabādheran tāṃstāñchiṣyānmahīpatiḥ ||6||

शब्दार्थ
• **धर्मसंरक्षणपरः** – धर्म-संरक्षण में तत्पर
• **धर्मेण** – धर्म/न्याय-मार्ग से
• **अर्थम्** – अर्थ/धन/कोष
• **विवर्धयेत्** – बढ़ाए/विकसित करे
• **ये ये** – जो-जो (लोग)
• **प्रजाः** – प्रजा/जनता को
• **प्रबाधेरन्** – बाधा/पीड़ा/उत्पीड़न पहुँचाते हों
• **तान्** – उन (सभी) को
• **शिष्यात्** – दण्डित/अनुशासित करे
• **महीपतिः** – राजा ।

भावार्थ
राजा धर्म-संरक्षण में तत्पर रहे, और धर्म (न्यायपूर्ण कर-व्यवस्था) के माध्यम से अपने अर्थ (कोष/धन) को बढ़ाए। तथा जो-जो लोग प्रजा को पीड़ा/बाधा पहुँचाते हैं (चोर, भ्रष्ट अधिकारी, अत्याचारी), उन सबको राजा दण्डित/अनुशासित (शिष्यात्) करे। कर-संग्रह एवं दण्ड-व्यवस्था – दोनों धर्म-बद्ध हों।

दार्शनिक विवेचन

'धर्मेणार्थं विवर्धयेत्' – धर्म-विरुद्ध अर्थ (अन्यायपूर्ण कर/लूट) पाप है; धर्म-सम्मत कर ही कोष-वृद्धि का साधन है। 'प्रबाधेरन्' – प्रजा-पीड़क दुष्ट (कण्टक) हैं – इन्हें 'शिष्यात्' (शास्ति/दण्ड) देना राजा का परम-कर्तव्य है। यह 'अर्थशास्त्र' का 'कोश-दण्ड' सिद्धान्त है – करों से कोष, दण्डों से व्यवस्था।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सरकार का दोहरा कर्तव्य – (१) न्यायसंगत कर-संग्रह (धर्मेण अर्थ) – जैसे GST, इनकम-टैक्स; (२) अपराधियों/भ्रष्टाचारियों का दमन (प्रबाधेरन् तान् शिष्यात्) – जैसे CBI, ED, कोर्ट-केस। धर्म-संरक्षण ही 'कानून-व्यवस्था' एवं 'आर्थिक-विकास' का आधार है।

श्लोक ७ (आर्यों/शास्त्रों द्वारा प्रशस्त ही धर्म)

श्लोक

यमार्याः क्रियमाणं हि शंसन्त्यागमवेदिनः ।
स धर्मो यं विगर्हन्ति तमधर्मं प्रचक्षते ॥७॥

IAST

Yamāryāḥ kriyamāṇaṃ hi śaṃsantyāgamavedinaḥ |
Sa dharmo yaṃ vigarhanti tamadharmaṃ pracakṣate ||7||

शब्दार्थ

- **यम्** – जिस (आचरण/कर्म) को
- **आर्याः** – आर्य/सज्जन/विद्वान्
- **क्रियमाणम्** – किये जाने पर
- **शंसन्ति** – प्रशंसा/समर्थन करते हैं
- **आगमवेदिनः** – आगम (शास्त्र/परम्परा) के ज्ञाता
- **सः** – वह
- **धर्मः** – धर्म है
- **यम्** – जिस (आचरण) को
- **विगर्हन्ति** – निन्दा/तिरस्कार करते हैं
- **तम्** – उसे
- **अधर्मम्** – अधर्म
- **प्रचक्षते** – कहते हैं ।

भावार्थ

विद्वान्, सज्जन एवं शास्त्र-परम्परा (आगम) के ज्ञाता लोग जिस आचरण की प्रशंसा (शंसन्ति) करते हैं, वही धर्म है; तथा जिस आचरण की वे निन्दा/तिरस्कार (विगर्हन्ति) करते हैं, वही अधर्म है। धर्म-अधर्म का मापदण्ड **शास्त्र-सम्मति एवं सज्जन-स्वीकृति** है – व्यक्तिगत-मति नहीं।

दार्शनिक विवेचन

यह **'धर्म-मीमांसा'** (Epistemology of Dharma) का मूल सूत्र है – धर्म की परिभाषा 'आगम' (वेद/शास्त्र) एवं 'आर्य-सम्मति' (सदाचार-परम्परा) पर आधारित है। यह 'स्मृति-शास्त्र' का 'आचार-प्रधान' सिद्धान्त है – जो आचरण समाज के कल्याणकारी एवं विद्वत्-वर्ग (आर्य) द्वारा मान्य है, वह धर्म है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'नैतिकता' (Ethics) एवं 'विधि' (Law) – संसद/न्यायालय (आधुनिक-आर्य) एवं संविधान/शास्त्र (आगम) द्वारा जो विधि-सम्मत एवं सामाजिक-रूप से स्वीकृत (शंसन्ति) है, वही 'धर्म' (कानून) है; जो निन्दित/अवैध (विगर्हन्ति) है, वह 'अधर्म' (अपराध) है – यही 'विधि-शासन' (Rule of Law) का प्राचीन आधार है।

श्लोक ८ (धर्म-अधर्म-ज्ञान से प्रजा-रक्षा एवं शत्रु-दमन)

श्लोक

धर्माधर्मौ विजानन् हि शासनेऽभिरतः सताम् ।
प्रजा रक्षेन्नृपः साधु हन्याच्च परिपन्थिनः ॥८॥

IAST

Dharmādharmau vijānan hi śāsane'bhirataḥ satām |
Prajā rakṣennṛpaḥ sādhu hanyācca paripanthinaḥ ||8||

शब्दार्थ
- **धर्माधर्मौ** – धर्म एवं अधर्म (दोनों) को
- **विजानन्** – भलीभाँति जानता हुआ
- **शासने** – शासन-व्यवस्था में
- **अभिरतः** – तत्पर/निष्ठावान
- **सताम्** – सज्जनों (की नीति) में
- **प्रजाः** – प्रजा/जनता की
- **रक्षेत्** – रक्षा करे
- **साधु** – उचित/भलीभाँति
- **हन्यात्** – दण्डित/नष्ट करे
- **परिपन्थिनः** – परिपन्थी/शत्रु/विरोधियों को ।

भावार्थ
जो राजा धर्म-अधर्म का विवेक रखता है, सज्जनों (सताम्) की शासन-नीति में तत्पर रहता है, वह प्रजा की उचित रक्षा (प्रजा-रक्षा) करता है तथा शत्रुओं/विरोधियों (परिपन्थिनः) का दमन/वध (हन्यात्) करता है। धर्म-विवेक ही 'रक्षा-दण्ड' का आधार है – अन्यथा अत्याचार या कमज़ोरी होती है।

दार्शनिक विवेचन

'विजानन्' – केवल पढ़ा-लिखा नहीं, बल्कि विवेकी (Prudent)। 'सतां शासने अभिरतः' – सज्जनों की शासन-पद्धति में निष्ठा – अर्थात् 'सौम्य-शासन' (Gentle Governance) का अनुसरण, किन्तु 'परिपन्थिनः' (प्रजा-विरोधी/अपराधी) के लिए कठोर दण्ड। यह 'साम-दाम-दण्ड-भेद' का 'दण्ड' पक्ष है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'लोकतांत्रिक-शासन' – एक अच्छा शासक (राजा) धर्म-अधर्म (विधि-अविधि) का ज्ञाता होता है, 'सतां शासन' (जनता/संविधान की नीति) का पालन करता है, प्रजा (नागरिकों) की रक्षा (सुरक्षा) एवं अपराधियों/आतंकियों (परिपन्थिनः) का दमन करता है – यही 'सुशासन' (Good Governance) एवं 'आंतरिक-सुरक्षा' है।

श्लोक ९ (दूष्य – राज-वल्लभ भी यदि पापी हों)

श्लोक

राज्योपघातं कुर्वीरन् ये पापा राजवल्लभाः ।
एकैकशः संहता वा तान् दूष्यान् परिचक्षते ॥९॥

IAST

Rājyopaghātaṃ kurvīran ye pāpā rājavallabhāḥ |
Ekaikaśaḥ saṃhatā vā tān dūṣyān paricakṣate ||9||

शब्दार्थ

- **राज्योपघातम्** – राज्य का उपघात/हानि/क्षति
- **कुर्वीरन्** – करते हों
- **ये** – जो
- **पापाः** – पापी/दुष्ट
- **राजवल्लभाः** – राज-वल्लभ (राजा के प्रिय/विश्वस्त) जन
- **एकैकशः** – अकेले-अकेले/व्यक्तिगत रूप से
- **संहताः** – संघ/समूह बनाकर
- **वा** – अथवा
- **तान्** – उन (सभी) को
- **दूष्यान्** – दूष्य (दूषित/क्षतिकारी/विद्रोही)
- **परिचक्षते** – कहते हैं/परिभाषित करते हैं ।

भावार्थ

यदि राजा के अपने प्रिय/विश्वस्त लोग (राजवल्लभ – अन्तरंग-मण्डल, रिश्तेदार, पसंदीदा मंत्री) राज्य को हानि पहुँचाने वाले पाप-कार्य करें, चाहे वे अकेले (एकैकशः) करें या समूह (संहता) में, तो शास्त्र उन्हें 'दूष्य' (भ्रष्ट/दूषित/दण्डनीय) कहता है। **स्वजन-भ्रष्टाचार भी असहनीय है** – इसका कोई बहाना नहीं।

दार्शनिक विवेचन

'राजवल्लभाः' – यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है – अन्तरंग-मण्डल (Inner Circle) का दुराचरण राज्य के लिए सबसे घातक होता है। 'एकैकशः संहता वा' – व्यक्तिगत या सामूहिक – दोनों में 'दूष्य' (Corrupt/Indispensable) हैं। यह 'अर्थशास्त्र' का 'वल्लभ-परीक्षा' (Testing of Favourites) सिद्धान्त है – राजा का अपना प्रिय भी दण्ड से मुक्त नहीं है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'भ्रष्टाचार-विरोधी' नीति – यदि प्रधानमंत्री/CEO के करीबी (राजवल्लभ) भी भ्रष्टाचार/गबन (राज्योपघात) करें, तो वे 'दूष्य' (अभियुक्त/Corrupt) हैं – चाहे वे अकेले हों या समूह में। यही 'इक्वलिटी-बिफोर-लॉ' (कानून के समक्ष समानता) एवं 'नीति-निरपेक्षता' (Zero-tolerance) का मूल है।

श्लोक १० (दूष्यों का दण्ड – गुप्त एवं प्रकाश)

श्लोक

दूष्यानुपांशुदण्डेन हन्याद्राजाविलम्बितम् ।
प्रदूष्य वा प्रकाशं हि लोकविद्वेषमागतान् ॥१०॥

IAST

Dūṣyān upāṃśudaṇḍena hanyād rājāvilambitam |

Praduṣṭā vā prakāśaṃ hi lokavidveṣam āgatān ||10||

शब्दार्थ

- **दूष्यान्** – दूष्य (भ्रष्ट/दण्डनीय) व्यक्तियों को
- **उपांशुदण्डेन** – उपांशु-दण्ड (गुप्त/अप्रकट दण्ड – जैसे विष, बिना कोर्ट-केस के हटाना) से
- **हन्यात्** – दण्डित/नष्ट करे

• **राजा** – राजा
• **अविलम्बितम्** – बिना विलम्ब/शीघ्र
• **प्रदूष्य** – (जो) प्रदुष्ट/भ्रष्टाचार प्रकट हो चुके हों
• **प्रकाशम्** – प्रकाश/खुलेआम (सार्वजनिक दण्ड – फाँसी, निर्वासन, कोर्ट-मार्शल)
• **हि** – निश्चय ही
• **लोकविद्वेषम्** – लोक-विद्वेष (जनता का द्वेष/घृणा)
• **आगतान्** – (जो) प्राप्त हो चुके हों (अर्थात् जो जनता द्वारा घृणित हो चुके हों) ।

भावार्थ

राजा को दूष्य (भ्रष्ट/अपराधी) व्यक्तियों का **गुप्त-दण्ड** (उपांशुदण्ड – जैसे पदच्युति, नजरबंदी) बिना विलम्ब (अविलम्बितम्) कर देना चाहिए। या, यदि वे लोग प्रदुष्ट (स्पष्ट भ्रष्टाचारी) हो गए हैं तथा जनता-द्वेष (लोकविद्वेष) को प्राप्त हो चुके हैं, तो उनका **प्रकाश/सार्वजनिक दण्ड** (जेल, फाँसी) किया जाए। अपराध की प्रकृति एवं जन-भावना के अनुसार दण्ड-प्रकार का चयन करें।

दार्शनिक विवेचन

यह **'दण्ड-विधि का विवेक'** (Classification of Punishment) है – 'उपांशुदण्ड' (गुप्त-दण्ड) राजनीतिक/प्रशासनिक स्थिरता हेतु, 'प्रकाश-दण्ड' (सार्वजनिक-दण्ड) न्याय-दर्शन एवं जन-रञ्जन हेतु। 'लोकविद्वेषमागतान्' – जिसकी लोक-निन्दा हो चुकी है, उसे गुप्त रूप से दण्ड देना अन्याय है; उसे खुलेआम दण्डित करना ही जनता का विश्वास बनाए रखता है – यह 'कौटिल्य' की 'उपांशु-दण्ड' नीति से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'श्वेत-कॉलर अपराध' (White-collar crime) – कम्पनी/सरकारी भ्रष्टाचारियों (दूष्य) को या तो **गुप्त रूप से** (उपांशु – जैसे 'गोल्डन हैडशेक/इस्तीफा-माँग) हटाया जाता है, अथवा **सार्वजनिक रूप से** (प्रकाश – जैसे CBI-गिरफ्तारी, मीडिया-ट्रायल) दण्डित किया जाता है। यही 'कॉर्पोरेट गवर्नेंस' एवं 'कानूनी-प्रक्रिया' का आधुनिकतम अनुप्रयोग है – जनता की भावना (लोकविद्वेष) एवं अपराध-गंभीरता (प्रदूष्य) के अनुसार दण्ड-स्तर निर्धारित होता है।

श्लोक ११ (दूष्य को गुप्त-आह्वान एवं गूढ़-शस्त्र-व्यवस्था)

श्लोक

राजा रहसि दूष्यं हि दर्शनायोपमन्त्रयेत् ।
गूढशस्त्रा विशेयुस्तं पश्चादासंज्ञिता नराः ॥११॥

IAST

Rājā rahasi dūṣyaṃ hi darśanāyopamantrayet |
Gūḍhaśastrā viśeyustaṃ paścādāsaṃjñitā narāḥ ||11||

शब्दार्थ

• **राजा** – राजा
• **रहसि** – एकान्त/गुप्त स्थान में
• **दूष्यम्** – दूष्य (भ्रष्ट/अपराधी) को
• **दर्शनाय** – दर्शन/मिलन/बुलावे के लिए
• **उपमन्त्रयेत्** – बुलाए/आमन्त्रित करे
• **गूढशस्त्राः** – गूढ़ (छिपे हुए) शस्त्र/हथियार धारण किए हुए

• **विशेयुः** – प्रवेश करें
• **तम्** – उस (दूष्य) के पास
• **पश्चात्** – पीछे/पश्चात् से
• **आसंज्ञिताः** – आज्ञापित/नियुक्त/चिन्हित
• **नराः** – मनुष्य/सैनिक/गुप्तचर

भावार्थ

राजा को चाहिए कि वह दूष्य (अपराधी/भ्रष्ट अधिकारी) को एकान्त (रहसि) में बुलाए (उपमन्त्रयेत्)। तब गुप्त रूप से हथियार धारण किए हुए तथा पहले से नियुक्त (आसंज्ञिताः) मनुष्य (सैनिक/रक्षक) उस दूष्य के पीछे-पीछे (पश्चात्) प्रवेश करें – अर्थात् उसे पकड़ने/दण्डित करने के लिए घेर लें। यह **गुप्त-कार्यवाही** (secret operation) की विधि है।

दार्शनिक विवेचन

यह '**रहस्य-दण्ड-विधान**' (Secretive Punishment) है – यदि दूष्य सार्वजनिक रूप से विद्रोह/भ्रष्टाचार में लिप्त न होकर गुप्त-षड्यन्त्रकारी हो, तो उसे सार्वजनिक रूप से दण्डित करने से पहले उसे एकान्त में बुलाकर उसका निपटान करना चाहिए, ताकि राज्य-व्यवस्था में खलल न पड़े। यह 'अर्थशास्त्र' की 'उपांशुदण्ड' (गुप्त-दण्ड) नीति है, जो 'शत्रु-दमन' हेतु कूटनीतिक चाल है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'खुफिया-कार्यवाही' (Intelligence Operations) – जैसे ED/CBI द्वारा किसी भ्रष्ट अधिकारी को 'समन' (सार्वजनिक नहीं, अपितु गुप्त) देकर पूछताछ करना, तथा उसके आस-पास सुरक्षा-बलों (गूढशस्त्राः) को तैनात करना – यही इस श्लोक का वर्तमान स्वरूप है। यह 'व्हाइट-कॉलर अपराध' की जाँच का प्रारम्भिक चरण है।

श्लोक १२ (द्वारपालों एवं शस्त्र-ग्राहियों की व्यवस्था)

श्लोक

विश्वस्ता हि विचिन्वीयुर्द्वाःस्थाः कक्ष्यान्तरागतान् ।
ते शस्त्रग्राहिणो ब्रूयुः प्रयुक्ताः स्म इति स्फुटम् ॥१२॥

IAST

Viśvastā hi vicinvīyurdvāḥsthāḥ kakṣyāntarāgatān |
Te śastragrāhiṇo brūyuḥ prayuktāḥ sma iti sphuṭam ||12||

शब्दार्थ

• **विश्वस्ताः** – विश्वस्त/वफादार
• **विचिन्वीयुः** – जाँच/परख/तलाश करें
• **द्वाःस्थाः** – द्वारपाल/प्रहरी
• **कक्ष्यान्तरागतान्** – कक्ष्य (भवन/कमरे/श्रेणी) के अन्तर (भीतर) आने वालों को
• **ते** – वे
• **शस्त्रग्राहिणः** – शस्त्र-ग्राही (हथियार उठाने वाले/सशस्त्र सैनिक)
• **ब्रूयुः** – कहें
• **प्रयुक्ताः** – नियुक्त/तैनात
• **स्म** – हैं (हम)
• **स्फुटम्** – स्पष्ट रूप से

भावार्थ

विश्वस्त (वफादार) द्वारपाल (प्रहरी) भवन/महल के आन्तरिक-कक्षों (कक्ष्यान्तर) में आने वाले व्यक्तियों की जाँच (विचिन्वीयुः) करें। तथा वे सशस्त्र सैनिक (शस्त्रग्राहिणः) स्पष्ट रूप से (स्फुटम्) यह घोषित करें कि "हम (राजा द्वारा) नियुक्त (प्रयुक्ताः) हैं" – अर्थात् उन्हें अपनी अधिकृत-स्थिति एवं कर्तव्य-क्षेत्र स्पष्ट रूप से ज्ञात हो। गुप्त-कार्यवाही के लिए प्रत्येक सोपान पर स्पष्ट-आदेश एवं विश्वसनीयता अनिवार्य है।

दार्शनिक विवेचन

यह '**शासन-तन्त्र का अनुशासन**' (Chain of Command) है – 'विश्वस्त' (Loyal) एवं 'स्फुटम् ब्रूयुः' (Clear communication) – गुप्त-कार्य में भी अस्पष्टता (ambiguity) विनाशकारी हो सकती है। 'कक्ष्यान्तर' – पद-क्रम एवं सुरक्षा-स्तर (Security clearance) का ज्ञान आवश्यक है। यह अर्थशास्त्र की 'संवृत' (शिष्टाचार-सुरक्षा) व्यवस्था है – हर प्रवेशकर्ता को उसके अधिकार-क्षेत्र के अनुसार पहचाना/जाँचा जाना चाहिए।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'सुरक्षा-प्रोटोकॉल' (Security Protocol) – किसी सरकारी/कॉर्पोरेट भवन (कक्ष्यान्तर) में प्रवेश करने वाले की सुरक्षा-जाँच, एवं तैनात सुरक्षाकर्मियों (शस्त्रग्राहिणः) को अपनी ड्यूटी (प्रयुक्ताः) स्पष्ट रूप से बताना – जैसे 'आईडी-कार्ड' एवं 'ब्रीफिंग'। यही 'एक्सेस-कंट्रोल' एवं 'ऑपरेशनल-सिक्योरिटी' है।

श्लोक १३ (शल्य-उद्धार – राज्य से काँटा निकालना)

श्लोक

इत्यादि दूष्यान् सन्दूष्य प्रजानामभिवृद्धये ।
विनयं श्रियमुत्कर्षं राजा शल्यं समुद्धरेत् ॥१३॥

IAST

Ityādi dūṣyān sandūṣya prajānāmabhivṛddhaye |
Vinayaṃ śriyamutkarṣaṃ rājā śalyaṃ samuddharet ||13||

शब्दार्थ

- **इत्यादि** – इस प्रकार आदि (उपर्युक्त विधियों से)
- **दूष्यान्** – दूष्य/दुष्टों को
- **सन्दूष्य** – दूषित/दण्डित/समाप्त करके
- **प्रजानाम्** – प्रजा/जनता की
- **अभिवृद्धये** – अभिवृद्धि/समृद्धि के लिए
- **विनयम्** – विनय/अनुशासन
- **श्रियम्** – श्री/समृद्धि/ऐश्वर्य
- **उत्कर्षम्** – उत्कर्ष/उन्नति
- **राजा** – राजा
- **शल्यम्** – शल्य (काँटा/दूष्य/विघ्न)
- **समुद्धरेत्** – उद्धार/निष्कासन/निकाल दे

भावार्थ

राजा इस प्रकार की विधियों द्वारा दूष्यों (भ्रष्ट/दण्डनीय) को दण्डित/निष्कासित (सन्दूष्य) करके प्रजा की अभिवृद्धि

(समृद्धि) के लिए राज्य में **विनय (अनुशासन), श्री (सम्पदा), एवं उत्कर्ष (उन्नति)** – इन तीनों को स्थापित करते हुए **शल्य (काँटा/विघ्न)** को समुद्धृत (बाहर निकाल) देता है। राज्य से दुष्ट-तत्त्व हटाना ही सुशासन का प्रथम-धर्म है।

दार्शनिक विवेचन

'शल्य' – यहाँ 'कण्टक' (काँटा) का पर्याय है – जो राज्य-शरीर में चुभ रहा हो (भ्रष्टाचार, अराजकता)। 'विनय' (Discipline) प्रजा में, 'श्री' (Wealth) कोष में, 'उत्कर्ष' (Progress) राष्ट्र में – ये तीनों तभी संभव हैं जब 'शल्य' (दूष्य/अपराधी) को निकाल दिया जाए। यह शल्य-चिकित्सा (Surgery) का राजनीतिक रूपक है – जैसे शस्त्र-चिकित्सक बिना क्षति के काँटा निकालता है, वैसे ही राजा न्यायपूर्वक दुष्टों को हटाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'प्रशासनिक-सुधार' (Administrative Reforms) – भ्रष्ट/अयोग्य अधिकारियों (दूष्यान्) को हटाकर (सन्दूष्य) सरकार **अनुशासन (विनय), आर्थिक-समृद्धि (श्री) एवं विकास (उत्कर्ष)** प्राप्त करती है। यही 'राज्य-सुधार' (State Reforms) का मूल है – 'शल्य-शोधन' अर्थात् 'जड़-स्तर पर सफाई'।

श्लोक १४ (बीज-अंकुर-उपमा – प्रजा की रक्षा एवं पोषण)

श्लोक

यथा बीजाङ्कुरः सूक्ष्मः परिपुष्टोऽभिरक्षितः ।
काले फलाय भवति साधु तद्वदियं प्रजा ॥१४॥

IAST

Yathā bījāṅkuraḥ sūkṣmaḥ paripuṣṭo'bhirakṣitaḥ |
Kāle phalāya bhavati sādhu tadvadiyaṃ prajā ||14||

शब्दार्थ

- **यथा** – जैसे
- **बीजाङ्कुरः** – बीज-अंकुर (बीज से निकला छोटा पौधा)
- **सूक्ष्मः** – सूक्ष्म/कोमल
- **परिपुष्टः** – भलीभाँति पुष्ट/सिंचित/पोषित
- **अभिरक्षितः** – रक्षित/सुरक्षित
- **काले** – समय/ऋतु आने पर
- **फलाय** – फल (उत्पादन/समृद्धि) के लिए
- **भवति** – होता है
- **साधु** – उत्तम/सम्यक्
- **तद्वत्** – उसी प्रकार
- **इयम्** – यह
- **प्रजा** – प्रजा/जनता

भावार्थ

जैसे बीज-अंकुर (पौधा) जो प्रारम्भ में सूक्ष्म/कोमल होता है, उचित पोषण (परिपुष्ट) एवं सुरक्षा (अभिरक्षित) पाकर समय (काले) आने पर उत्तम फल (समृद्धि) देता है – ठीक उसी प्रकार यह प्रजा (यदि राजा उसे सुरक्षा एवं पोषण दे) तो वह समृद्ध/फलदायी बनती है। **प्रजा ही राज्य का बीज-रूप है।**

दार्शनिक विवेचन

यह **'कृषि-रूपक'** (Agricultural Metaphor) है – 'बीज' (Seed) = प्रजा/जन-संसाधन; 'परिपुष्टि' = शिक्षा/स्वास्थ्य/रोज़गार (सुविधाएँ); 'अभिरक्षा' = कानून-व्यवस्था/सुरक्षा; 'काले फल' = आर्थिक-उत्पादन/सामाजिक-समृद्धि। राजा का कर्तव्य है कि वह प्रजा-रूपी बीज को सुरक्षित रखे और उसका पोषण करे – यह 'कारण-फल-सिद्धान्त' (Seed-Plant-Fruit Theory) है, जो अर्थशास्त्र के 'प्रजा-कोष-सम्बन्ध' को स्पष्ट करता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'मानव-संसाधन-विकास' (HRD/Human Development Index) – यदि सरकार शिक्षा (पोषण), स्वास्थ्य (रक्षा), एवं अवसर प्रदान करे, तो जनता (बीज) 'फल' (स्किल्ड फोर्स/जीडीपी/नवाचार) देती है। कोविड-काल में वैक्सीनेशन/सुरक्षा (अभिरक्षा) एवं आर्थिक-पैकेज (परिपुष्टि) – इसी सिद्धान्त पर आधारित थे।

श्लोक १५ (दण्ड-संतुलन – नाति-तीक्ष्ण, नाति-मृदु)

श्लोक

उद्वेजयति तीक्ष्णेन मृदुना परिभूयते ।
तस्माद्यथार्हतो दण्डं नयेत् पक्षमनाश्रितः ॥१५॥

IAST

Udvejayati tīkṣṇena mṛdunā paribhūyate |
Tasmādyathārhato daṇḍaṃ nayet pakṣamanāśritaḥ ||15||

शब्दार्थ

- **उद्वेजयति** – उद्वेजित/आतंकित/भयभीत कर देता है
- **तीक्ष्णेन** – तीक्ष्ण/कठोर/अत्यधिक दण्ड से
- **मृदुना** – मृदु/कोमल/अत्यल्प दण्ड से
- **परिभूयते** – परिभूत/अपमानित/तुच्छ समझा जाता है
- **तस्मात्** – इसलिए
- **यथार्हतः** – यथार्ह (जैसा उचित/अपराध-अनुसार)
- **दण्डम्** – दण्ड
- **नयेत्** – लागू/प्रयोग करे
- **पक्षम्** – पक्षपात/तरफ़दारी
- **अनाश्रितः** – जो आश्रित/ग्रहण न करे (अर्थात् निष्पक्ष/पक्षपात-रहित)

भावार्थ

अत्यधिक कठोर (तीक्ष्ण) दण्ड प्रजा को आतंकित (उद्वेजयति) कर देता है, तथा अत्यधिक मृदु/हल्का (मृदुना) दण्ड शासक को अपमानित (परिभूयते – लोग उसका अपमान करने लगते हैं) करता है। इसलिए राजा को अपराध-गंभीरता के अनुसार (यथार्हतः) दण्ड देना चाहिए, तथा वह किसी भी प्रकार का **पक्षपात (पक्षम्)** न करे (अनाश्रितः) – अर्थात् दण्ड-व्यवस्था न्यायोचित एवं निष्पक्ष हो।

दार्शनिक विवेचन

यह **'गोल्डन-मीन-नीति'** (Doctrine of Golden Mean) है – दण्ड-प्रणाली में माध्यम-मार्ग (Madhyama-mārga)। 'तीक्ष्ण' (अत्याचारी-राजा) – जनता विद्रोह करती है; 'मृदु' (कमज़ोर-राजा) – जनता अवज्ञा करती है। 'यथार्हतः' – अपराध-भेद

(कृति-अनुसार दण्ड) – यह मनुस्मृति एवं अर्थशास्त्र का मूल-दण्ड-सिद्धान्त है। 'पक्षमनाश्रितः' – राजा का निष्पक्ष होना उसके धर्म-पालन का प्रमाण है – भाई-बंधु एवं शत्रु दोनों पर समान-दण्ड।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'न्याय-प्रणाली' (Judicial System) – अपराध की गंभीरता के अनुसार सजा (यथार्हतः – जैसे चोरी पर छोटा जुर्माना, हत्या पर उम्रकैद), न अति-कठोर (जैसे छोटे अपराध पर फाँसी – अमानवीय), न अति-मृदु (जैसे गंभीर अपराध पर ज़मानत – न्याय-हीनता)। 'पक्षमनाश्रितः' – न्यायालय का अमीर/गरीब, दलित/सवर्ण, मित्र/शत्रु – सब पर एक-समान दृष्टि (Equality before Law) – यही संविधान का 'समता-सिद्धान्त' है।

निष्कर्ष

कण्टकशोधनप्रकरणम् का मूल संदेश यह है कि राज्य की समृद्धि का आधार केवल संसाधन या शक्ति नहीं, बल्कि **राज्य-शरीर की आन्तरिक शुद्धता** एवं **न्यायोचित दण्ड-व्यवस्था** है। जिस राजा में धर्म-अधर्म का विवेक, निष्पक्षता, साहस, सुरक्षा-प्रबन्धन तथा दण्ड-संतुलन का समन्वय होता है, वही प्रजा का विश्वास अर्जित कर राज्य को उन्नति के पथ पर अग्रसर कर सकता है।

महर्षि कामन्दक ने इस सर्ग में स्पष्ट किया है कि शासन का वास्तविक मूल्य केवल कर-संग्रह अथवा बाह्य सुरक्षा में नहीं, बल्कि **आन्तरिक अनुशासन**, **भ्रष्टाचार-निवारण**, **न्याय-पालन** तथा **प्रजा-पोषण** में निहित है। राजा के प्रियजन (राजवल्लभ) भी यदि राज्य-हानि करें तो वे दण्ड से मुक्त नहीं हैं – यह **'कानून के समक्ष समानता'** का प्राचीनतम सूत्र है, जिसकी पुष्टि कौटिल्य के अर्थशास्त्र के 'वल्लभ-परीक्षा' सिद्धान्त से होती है। गुप्त (उपांशु) एवं प्रकाश (सार्वजनिक) दण्ड-विधियों का विवेक, अति-तीक्ष्ण एवं अति-मृदु दण्ड के बीच **संतुलन** (जिसका निर्देश मनुस्मृति में भी मिलता है), तथा **शल्य-उद्धार** (दुष्ट-निष्कासन) की समग्र प्रक्रिया – ये सभी सिद्धान्त आज भी **सुशासन, न्यायिक-प्रक्रिया, भ्रष्टाचार-निरोध, आन्तरिक-सुरक्षा एवं कॉर्पोरेट प्रशासन** के लिए समान रूप से प्रासंगिक हैं।

संदर्भ

1. मूल ग्रन्थ एवं शास्त्र (जिनका प्रत्यक्ष जिक्र हुआ है)

- **कामन्दकीय नीतिसार** — आचार्य कामन्दक (मूल संस्कृत ग्रन्थ)।
- **कौटिलीय अर्थशास्त्र** ।
- **मनुस्मृति**।
- **श्रीमद्भगवद्गीता**।
- **चरकसंहिता**।

ऑनलाइन संसाधन

2. **कामन्दकीय नीतिसार षष्ठ सर्ग (कण्टकशोधनप्रकरणम्) सप्ताङ्ग राज्य, दण्ड-व्यवस्था एवं सुशासन का शास्त्रीय मार्गदर्शन**

   उपलब्ध: https://indianphilosophyethics.blogspot.com/2026/07/kamandakiya-nitisara-sarga-6-kantakashodhana.html